International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 132-134

'कामरेड गिद्ध' उपन्यास में अभिव्यक्त राजनीतिक विद्रूपता

सोनदीप
(शोधार्थी) पी.एच.डी. हिन्दी शोध केन्द्र एस.सी.डी. राजकीय महाविद्यालय लुधियाना, भारत

प्रस्तावना

'राजनीति' दो शब्दों 'राज' तथा 'नीति' के संयोग से निर्मित है जिसका भाव 'राज करने की नीति' से लिया जाता है। वस्तुतः यह ''वह नीति है जिसका अवलंबन कर राजा अपने राज्य की रक्षा करता है और शासन व्यवस्था को दृढ़ करता है।''[1] राजनीति द्वारा ही राज्य का विकास कार्य संभव है, लेकिन राज्य के नागरिक का कल्याण व्यापक स्तर पर तभी संभव है जब राजनीति से जुड़े लोग अर्थात् राजनीतिज्ञ इसमें सेवा भाव से सम्बद्ध हों। इस क्षेत्र में आनेवाले सभी लोगों से अपने दायित्त्व का निर्वाह, जनकल्याण की भावना को प्रमुखता देते हुए, करने की अकांक्षा होती है। यह किसी भी देश का एक ऐसा दर्पण है, जो सम्पूर्ण देश की आर्थिक नैतिक, धार्मिक, सामाजिकादि परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब उपस्थित करता है। 'राजनीति' शब्द के अर्थ तथा इससे जुड़े दायित्त्वपूर्ण जनकल्याणादि को ध्यान में रखते हुए यदि देश की वर्तमान राजनीति का अवलोकन किया जाय तो स्थिति संतोषजनक नहीं, बल्कि भयावह प्रतीत होती है। वर्तमान राजनीति की दिशा और दशा देखकर ऐसा अनुमान करता निरर्थक सा जान पड़ता है। आज की राजनीति में राजहित या जनहित की अपेक्षा स्वहित के दिनों–दिन बढ़ते चलन ने राजनीति के विघटित होने के तमाम द्वार खोल दिये हैं। जिसके कारण ही लोगों में असंतोष घर कर गया है, उन्हें देश की शासन–व्यवस्था से ऊब सी होने लग गई है, जनता ऐसी व्यवस्था से छुटकारा पाना चाहती है और इसके लिए संघर्षरत है, देश में अराजकता का माहौल व्याप्त है, लोग छोटे–छोटे गुट में बँधकर राजनीतिक गठजोड़ करने लगे है तथा एक–दूसरे पर आरोप–प्रत्यारोप करते हुए, परस्पर **द्वेज** की भावना रखते हुए, एक–दूसरे को हानि पहुँचाने से भी नहीं चूकते। देश की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था का रूप–स्वरूप देखकर जनता को गर्व नहीं, बल्कि शर्मसार होना पड़ रहा है, क्योंकि आज की राजनीति किसी व्यवस्थित नीतियों पर नहीं बल्कि कुनीतियों द्वारा संचालित है, नीति नियामकों की तानाशाही से प्रभावित है। 'राजनीति' में व्याप्त ऐसी दुर्व्यवस्था को देखते हुए ही आज कोई भी व्यक्ति साम, दाम, दण्ड, भेद से राजनीति में घुस जाना चाहता है और इसके सहारे सब कुछ पा लेना चाहता है। सब कुछ पा लेने की इसी होड़ ने राजनीति को इतना घिनौना बना दिया है कि राजनीति से अब सिर्फ एक अर्थ ही उद्घाटित होता है–'जनता पर राज करने की नीति'।

देश की वर्तमान राजनीतिक दशा को ध्यान में रखते हुए ही के॰ एल॰ गर्ग ने एक उपन्यास की कल्पना की 'कामरेड गिद्ध' नामक यह उपन्यास आरम्भ में पंजाबी में लिखा गया परन्तु बाद में इसकी लोकप्रियता को देखते हुए इसका हिन्दी में अनुवाद किया गया। उपन्यासकार मूलतः पंजाब से संबंध रखते हैं जिन्होंने आरंभिक दौर में अपनी मातृभाषा में रचनाएँ लिखी परन्तु हिन्दी की ओर भी इनका आकर्षण रहा। इनके हिन्दी प्रेम ने इन्हें हिन्दी में कहानी और उपन्यास लिखने के लिए प्रेरित किया। के॰ एल॰ गर्ग का यह उपन्यास देश की वर्तमान राजनीति दुरावस्था की पोल खोलता है तथा राजनीति से पनपे कुशासन पर से भी पर्दा उठाता है। उपन्यासकार की लेखन शैली पर व्यंग्य का प्रभाव है यही कारण है कि '' 'कामरेड गिद्ध' हमारी राजनीति, मजदूर आंदोलनों तथा अफसरशाही के बीच बजबजाती सड़ांध पर एक सजग व्यंग्यकार की दृष्टि है।''[2] यद्यपि यह उपन्यास इक्कीसवीं सदी में प्रकाशित है परन्तु इसमें स्वतंत्रता के पचास से भी अधिक वर्ष जीत जाने की ''उस कपट यात्रा का दस्तावेज बनाने का प्रयत्न है, जो हमारी यात्रा के कदमों की नियति बन गया है।''[3] बीसवीं सदी की भाव–भूमि पर रचित इस कृति में राजनीतिक क्षेत्र में व्याप्त विसंगतियों और उनसे पनपे दुष्परिणामों को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि यह औपन्यासिक कृति इक्कीसवीं सदी के डेढ़ दशक बीत जाने के बाद भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी यह प्रकाशन काल में रही होगी।

उपन्यासकार ने इस कृति में प्रतीक पात्रों के माध्यम से देश की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था, मजदूर आंदोलनों तथा राजनीति से संचालित देश के अफसरशाही कार्यव्यापारों को प्रस्तुत किया है। इस कृति को तीन भागों में बांटा गया है जिसमें प्रथम भाग का नाम 'गिद्ध लोक' है, द्वितीय भाग 'देव लोक' तथा अंतिम भाग 'नरक लोक' है। कृति का प्रथम भाग अर्थात् 'गिद्ध लोक' मजदूरों, उनकी समस्याओं तथा समस्यापूर्ति के अभाव से उपजे असंतोष और संघर्ष अर्थात् हड़ताल पर केन्द्रित है। 'गिद्ध' ऐसे मजदूरों का प्रतीक बनकर उभरा है जिनसे काम तो करवा लिया जाता है परन्तु उन्हें तनख्वाह नाम मात्र की मिलती है, जिनसे उनका जीवन–बसर बमुश्किल चल रहा है। इन मजदूरों को दिन–रात काम करने के लिए 'बोनस' के रूप में मालिक से गालि–गलौच, बेइज्जती आदि मिलती है। इन्हें पता है कि इनके मालिक पूँजीपति हैं, सत्ता और शासन व्यवस्था में उनकी गहरी पैढ है, यही कारण है कि वर्षों से अपने ऊपर होने वाले अत्याचार को वे सहते आये थे। परन्तु आधुनिकता की हवा ने उन्हें भी चेतित कर दिया था तथा राजनीति के प्रभाव में वे लोग भी आ चुके थे। राजनीति में व्याप्त गुटबंदी के प्रवृत्ति के कारण वे एक जुट अर्थात् संगठित तो होने लगे थे परन्तु उनमें भी आपसी फूट अर्थात् अलग–अलग राजनीतिक दलों की तरह अलग–अलग गुट बन गये। ये सभी गुट– किसी–न–किसी राजनीतिक दल से प्रभावित होने लगे जिनका लक्ष्य तो मजदूरों अर्थात् गिद्धों का उद्धार ही था परन्तु तरीके अलग–अलग थे, ठीक उसी प्रकार जैसे इस देश में राजनीतिक दल सैकड़ों हैं, जो इस देश का उद्धार करना चाहते हैं, जनता का कल्याण करना चाहते हैं, परन्तु आजादी के 70 वर्ष बीत जाने के बावजूद आज भी जनता त्राहि–त्राहि में है।

इस देश की यही त्रासदी है कि सभी राजनीतिक पार्टियाँ एक–दूसरे से अलग रहकर, प्रतिस्पर्द्धा में, परस्पर द्वेष रखते हुए, एक–दूसरे पर लांछन लगाकर जनता का कल्याण करना चाहते हैं परन्तु देश की जनता दिन–व–दिन और अधिक बदहाल होती जा रही है। ऐसे लोग यह बात क्यों नहीं समझते कि संगठित होकर ही समस्याओं का निदान ढूँढा जा सकता है, आपसी–फूट से नहीं। उपन्यास के आरम्भ (गिद्ध लोक खण्ड) में ही राजनीतिज्ञों की इस प्रवृत्ति का अनुसरण करते हुए मजदूरों अर्थात् गिद्धों को देखा गया

है जो शासन के विरूद्ध हड़ताल पर बैठे हैं परन्तु संगठित होकर नहीं, बल्कि अलग–अलग गुटों में। सभी गुट न्याय की मांग कर रहे हैं परन्तु दूसरे गुट के विरूद्ध जा कर। सभी गुटों के अपने–अपने सिद्धान्त हैं जिनके सहारे वे जनकल्याण का मोर्चा जीत लेना चाहते हैं। उपन्यासकार लिखता है कि मजदूर के प्रतीक के रूप में आए गिद्ध पात्रों में व्याप्त इस प्रकार की मनोवृत्ति को कुशलता से अभिव्यक्त करते हैं। उपन्यासकार के शब्दों में, ''गिद्ध हड़ताल का बिगुल बजाने के लिए बड़ी ही गम्भीरता से विचार कर रहे थे। अलग–अलग संगठन हड़ताल के मत में अपना–अपना दृष्टिकोण पेश करने का प्रयत्न कर रहे थे। दृष्टिकोण उनके अपने–अपने सिद्धान्तों से जुड़े हुए थे और सिद्धन्त देशों **के**। कोई भी संगठन के लोग अपनी–अपनी पाठशाला से सब सीख कर आये हुए थे। कुछ पाठशाला में विदेशी शिक्षकों की घुसपैठ भी निरंतर जारी थी।'' [4] उपन्यासकार के ये व्यंग्यपूर्ण कथन देश भर में संगठनों के नाम पर होनेवाले असंगठित कार्यव्यापारों का कच्चा–चिट्ठा खोलकर रख देती है। इन शब्दों ने इस बात की पुष्टि की है कि कहीं–न–कहीं ये संगठन किसी–न–किसी राजनीतिक पार्टियों के संरक्षण में पनप रहे हैं, जिन पार्टियों में उन लोगों एवं सिद्धान्तों की भी घुसपैठ हो रही है जिन्हें भारतीय समाज–संस्कृति आदि की समझ ही नहीं है। ऐसे संगठन आयातित विचारधाराओं को अपनाकर एक–दूसरे पर थोपते रहते हैं। यही कारण है कि इतने सारे संगठन, जो हड़ताल, क्रांति आदि द्वारा जनकल्याण करना चाहते हैं, के होने के बावजूद किसी प्रकार का लाभ आम लोगों को नहीं मिल पा रहा है। उपन्यासकार उन कारणों की तह में जाकर व्यंग्य करता हुआ लिखता है–''हरेक संगठन में अपने सिद्धान्त और दृष्टिकोण से मैच करता और दृष्टिकोण के रंग में रंगा झंडा अपने–अपने कंधे पर उठाया हुआ था।'' [5]

उपन्यास के प्रथम भाग अर्थात् गिद्ध लोक में उत्पन्न हड़ताल की स्थिति को अभिव्यक्त करते हुए समाज में व्याप्त नित–नये बनने वाले संगठनों को आड़े हाथों लिया है तथा स्पष्ट किया है कि ये सारे संगठन किसी–न–किसी राजनीतिक दल या सिद्धान्तों के द्वारा संचालित है, उनके हाथों की कठपुतली मात्र है। जन कल्याण या जनता को न्याय दिलाने के नाम पर बनने वाले ऐसे संगठन भी राजनीतिक दुष्प्रवृत्ति के शिकार हैं, परिणामस्वरूप इनमें एकता नहीं बल्कि फूट पायी जाती है। वास्तव में ऐसे संगठन के प्रतिनिधि स्वयं का वर्चस्व दिखाकर, इसी रास्ते राजनीति की गलियारों में प्रवेश पाना चाहते हैं और प्रवेशोपरांत ऐश–परस्ती करना चाहते हैं। उपन्यास के तीसरे भाग, जिसे देवलोक कहा गया है, में राजनीति की दुनियां में प्रविष्ट हुए राजनीतिज्ञों के कार्यव्यापारों का संक्षिप्त लेखा–जोखा प्रस्तुत है। देवलोक से पूर्व भाग अर्थात् मात लोक अर्थात् आम जन जीवन में जहाँ अराजकता व्याप्त है, हर तरफ कुशासन दिखता है, वहीं इसके विपरीत देवलोक अर्थात् राजनीति में संलग्न नेतागण चैन की नींद लेते रहते हैं। मातलोक का दृश्य उपस्थित करते हुए उपन्यासकार लिखता है– ''भैय्या किसी को भी अपने कर्त्तव्य का अहसास नहीं रहा, आजकल। जिसके जो हाथ लगे, जैसे भी लगे, छीना झपटी में लगा हुआ है। लोग जाएं अंधे कुएँ में, देश गिरे गहरे खड्डे में। आपा–धापी का दौर है चारों तरफ। नाम, दाम की लूट है, लूटी जाए सो लूट।'' [6] इसके साथ ही सत्ताधारियों की अकर्मण्यता की वजह से जर्जर हुए शासन व्यवस्था की पोल भी उपन्यासकार ने खोली है जिनसे संबंधित कर्मचारी अपने दायित्व से भटक कर सिर्फ अर्थ को ही महत्ता देते हैं। इस हेतु वे मासूम जनता को तो निर्बाध लूटते ही हैं, साथ–ही हड़तालादि के माध्यम से निरंतर अपनी तनख्वाह बढ़ाने की भी मांग करते हैं। उपन्यासकार इस प्रसंग में लिखता है– ''काम करके तो कोई राजी नहीं आजकल। सब मुफ्तखोर इकट्ठे हो गए हैं चारों तरफ। जरा से काम की खातिर भी दफ्तरों में पचासों चक्कर काटने पड़ते हैं। मजाल है कोई लेन–देन के बगैर फाईल को हाथ भी लगाए। कहो भैय्या, ऊँगली पर चोट लगी है, थोड़ा से पेशाब कर दो आराम आ जाएगा। झट चोंच खोल के पूछेंगे, कितने का करूँ भाई। ये तो कटी ऊँगली पे पेशाब नहीं करते, और चौथे दिन मुँह उठा लेते हैं हड़ताल पर जाने को। कह देते हैं– हमें डी॰ ए॰ दो, हमें भत्ता दो, हमें दो।'' [7] उपन्यासकार ने यहाँ शासनतंत्र से जुड़े बाबुओं, अफसरों, क्लर्कों के कार्यव्यापारों की पोल खोलते हुए, इनके लालची एवं कामचोर प्रवृत्ति पर तीखा तंज किया है।

उपन्यासकार ने प्रसंगवश इस प्रकार के राजनीतिक परिवेश में व्याप्त सामाजिक कुप्रथाओं की भी खबर ली है। इक्कीसवीं सदी में भी पूर्व सदियों से चली आ रही जाति प्रथा की पोल खोलते हुए उपन्यासकार ने उस पर तीखा व्यंग्य किया है। आज भी इस समाज में जाति के नाम पर भेद–भाव किया जाता है। इस प्रसंग में उपन्यासकार लिखता है कि ''किसी जाति का कुएँ पर कब्जा था तो किसी की गुरूद्वारे पर। निम्न जाति के लोगों के लिए तो पीने के पानी की भी तंगी थी। बाहर दिशा मैदान जाने की समस्या आ रही थी। मानों सब कुछ उच्च और बड़ी जातियों के लिये ही बना हो। निम्न जातियाँ ढ़ोर, गंवार और डंगर ही हों।'' [8] कृतिकार इस तथ्य को देखकर चिंतित है कि वर्तमान शासनतंत्र की बदहाल नीतियों के कारण जहाँ लोगों को मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित रखा जा रहा है वहीं इस वैज्ञानिक युग के समाज के लोग अभी तक सामंती विचारधारा से मुक्त नहीं हुए हैं। यही कारण है कि निम्न वर्ग को सदियों से दबाया गया है। आज भी शहरों का गाँव कहीं भी उन्हें मुख्यधारा में शामिल नहीं किया जाता है, उन्हें समाज से बाहर रखने का हरसंभव प्रयास किया जाता है। उपन्यास का एक पात्र इसी बात की चिंता करता हुआ कहता है–''समाज में हमने उन्हें कहाँ रहने दिया है। उनकी बस्ती, उनकी **हांडाघाटी** तो हमने पहले ही गाँव–कस्बे से बाहर निकाल दी है।'' [9] परन्तु जब चुनाव आता है तब राजनेता लोग उन्हें समाज के मुख्य धारा में शामिल करने की, उनसे सम्मानपूर्वक व्यवहार करने का नारा लगाते हैं। चुनाव के पश्चात् सभ्रांत लोगों का साथ देने वाला नेता चुनाव के पूर्व आकर तरह–तरह से रिझाने की कोशिश करता है और उन्हें मनाने वाले स्वर में बीती बात पर पर्दा डालने के लिए प्रेरित करता है। नेता के शब्दों में, ''देखिए हम सब ने यहीं रहना है कहीं अन्य जगह नहीं रहना है। फिर मिलजुलकर ही क्यों न रहें। एक–दूसरे को कष्ट देने से कुछ बनने संवरने वाला नहीं है। आईये, फिर से नए जीवन की शुरूआत करें।'' [10] इस प्रकार नेता लोग अपनी चुनावी रोटी को सेंकने के लिए तत्पर दीख पड़ते हैं और जहाँ कहीं भी अवसर मिले, उसे हजम करने के लिए भी तैयार रहते हैं।

आजकल नेताओं द्वारा किसी भी विषम परिस्थिति को संभाल न पाने की स्थिति में यह ज़ोर–शोर से कहना शुरू कर देते हैं कि ऐसी परिस्थिति उनके असंगत कार्यव्यापारों का परिणाम न होकर किसी विदेशी ताकतों द्वारा की गई दखलंदाजी या शरारत का परिणाम है। 'कामरेड गिद्ध' उपन्यास में भी इस प्रकार के प्रसंग उपस्थित करते हुए कृतिकार ने नेताओं पर कटाक्ष किया है। उपन्यास का एक पात्र कहता है– ''कुछ देशद्रोही तत्त्व देश की एकता और अखण्डता के लिए गम्भीर चुनौती बने हुए हैं। कुछ विदेशी शक्तियाँ हमारे अस्तित्त्व को तार–तार करने पर तुली हुई हैं। दंगाइयों और देशद्रोहियों को आधुनिक हथियारों की सप्लाई। इस सम्बन्ध में हमारे संवाददाता को कुछ बहुत ही अहम सुराग लगे हैं, जो शीघ्र ही प्रकाशित किये जा रहे हैं। देशद्रोहियों से सावधान।'' [11] इस प्रकार जनता चाहे त्राहि–त्राहि करती रहे परन्तु अफसरों और सत्ताधारियों के कान में जू तक नहीं रेंगती। जब

कभी स्थिति बेकाबू हो जाय तो देश विरोधी या विदेशी ताकतों का नाम लेकर अपना पल्ला झाड़ लेते हैं। उपन्यास में अवतरित प्रसंगों के माध्यम से उपन्यासकार ने राजनेताओं के इस प्रकार के चरित्र को बेनकाब किया है जो जनता के दुःख–दर्द की चिंता किये बिना ऐशो–आराम से चैन की नींद लेते हैं। उपन्यास में अवतरित 'देवलोक' का प्रसंग इसी प्रवृत्ति को उजागर करता है।

अस्तु, के॰ एल॰ गर्ग ने अपनी आलोच्य कृति में भारतीय राजनीति व्यवस्था और उसमें होने वाले कार्यव्यापारों का लेखा–जोखा बड़ी ही सजगता एवं तथ्यात्मकता से प्रस्तुत किया है। रचना के कथ्य को देखकर स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यासकार भारतीय राजनीति के विषय में गहरी पैठ रखते हैं। देश की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था आज का नहीं बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से इस क्षेत्र में आई दुरावस्था का ही परिणाम है। आज की राजनीति सिर्फ स्वार्थपरता, अवसरवादिता, गुंडागर्दी, भ्रष्टाचार आदि का केन्द्र बन चुकी है, जिसे देखकर उपन्यासकार क्षुब्ध है। यही कारण है कि उपन्यासकार ने इस कृति में अपनी गहन संवेदना का परिचय देते हुए देश को गर्त में ले जाने वाले राजनीतिज्ञों की आलोचना की है तथा बेबस, लाचार लोगों के प्रति सहानुभूति भी प्रकट की है।

संदर्भ

1. दास, श्याम सुन्दर(सम्पादक), 'हिन्दी शब्द सागर', पृष्ठ–475
2. गर्ग, के॰ एल॰, 'कामरेड गिद्ध', इन्दौरः मानस पब्लिकेशन, संस्करण–2003, पृष्ठ–3
3. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–3
4. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–8
5. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–8
6. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–24
7. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–25
8. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–27
9. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–32
10. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–32
11. पूर्वोक्त, 'कामरेड गिद्ध' पृष्ठ–35